तृतीय अध्याय

शम्बूक' में वर्णित सामाजिक समस्या।

साहित्य और समाज -

साहित्य समाज का प्रतिबिंब होता है । यह समाज का वह परिधान है जो जनता के जीवन के सुख-दु:ख, हर्ष-विषाद, आकर्षण-विकर्षण के ताने -बाने से बुना जाता है । वह जीवन की व्याख्या करता है । इसमें विशाल मानव - जाति की आत्मा का स्पंदन ध्वनित होता है । वह जीवन की व्याख्या करता है । ' साहित्य ' का अर्थ है - जो हित साहित हो । अर्थात जो हित साधन करता है, उसे साहित्य कहते है । भाषा के माध्यम से ही साहित्य हितकारी रुप में प्रकट होता है ।

अर्थात जो हित साधन करता है, वह साहित्य है । इस विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि साहित्य का मुख्य उद्देष्य मानवमात्र का हित साधन करना है । ऐसा कर के वह सामाजिक उन्नति में सबसे बडा सहयोग प्रदान करता है ।

वाल्मिकी ने रामायण में एक आदर्श समाज -व्यवस्था का चित्रण कर अपने दृष्टिकोण के अनुसार समाज के विभिन्न पहलुओं की विवेचना करते हुए यह सिद्ध किया कि मानव समाज किस पथ का अनुसरण करने से पूर्ण संतोष और सुख का अनुभव कर सकता है । तुलसी ने भी अपने समय की सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर रामराज्य और राम-परिवार को मानव समाज के सम्मुख आदर्श रुप में प्रस्तुत किया ।

"साहित्य और समाज का संबंध दोहरा है । एक ओर तो साहित्यकार समाज का अध्ययन, उसकी संस्थाओं, समस्याओं, आंदोलनों, आदर्शों और उसके भविष्य सहित करता है,दूसरी ओर समाजशास्त्र साहित्य का अध्ययन एक सामाजिक संस्था के रुप में करता है । " [1]

साहित्यकार या कवि भी स्वयं समाज का एक सदस्य है,जिसका अपना एक विशेष सामाजिक स्थान है, समाज से ही उसे मान्यता और पुरस्कार प्राप्त होता है । जो श्रोता या पाठक वर्ग है,वह भी सामाजिक है । साहित्य का संबंध भी अनेक सामाजिक संस्थाओं से है । कवि वास्तव में समाज की अवस्था, वातावरण, धर्म-कर्म, रीति-नीति तथा सामाजिक शिष्टाचार, तथा लोक -व्यवहार से ही अपने काव्य के उपकरण चुनता है और उसका प्रतिपादन अपने आदर्शों के अनुरुप ही करता है । साहित्यकार उसी समाज का प्रतिनिधीत्व करता है, जिसमें वह जन्म लेता

वह अपनी समस्याओं का सुलझाव,अपने आदर्श की स्थापना, अपने समाज के आदर्शों के अनुरुप ही करता है । जिस सामाजिक वातावरण में उसका जन्म होता है, उसीमें उसका शारीरिक, बौद्धिक, और मानसिक विकास भी होता है ।

निःसंदेह साहित्य से एक सामाजिक तस्वीर निकाली जा सकती है । उसमें व्यक्त विचारों से तत्कालीन समाज की विचारधारा का पता लगाया जा सकता है । साहित्यकार जिस समाज का अंग होता है,उस समाज का ही चित्रण करता है । इस चित्रण में समाज सुधार की भावना रहती है । समाजशास्त्रीय दृष्टि से साहित्य एक सामाजिक संस्था है । भाषा भी, जिसे वह माध्यम के रुप में प्रयुक्त करता है, एक सामाजिक कृति है । प्रतीक, अलंकार और छंद जैसे साहित्यिक साधन भी सामाजिक हैं । साहित्य जिस जीवन का अनुकरण करता है, वह भी बहुत हद तक एक सामाजिक वास्तविकता है । इसप्रकार साहित्य और समाज का अटूट संबंध है ।

सामाजिक समस्या -

कवि या लेखक अपने समय का प्रतिनिधि होता है । उसे जैसा मानसिक खाद मिल जाता है, वैसी ही उसकी कृति होती है । वह अपने समय के वायुमंडल में घुमते हुए विचारों को मुखरित कर देता है ।

साहित्य सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है । अतः साहित्य का इतिहास मानव - समाज के बाह्य एवं आंतरिक विकास का लेखा -जोखा हो जाता है । समाज के सम्मुख आनेवाली समस्याओं को सुलझाने में वह उसका पथ -प्रदर्शन भी करता है । उसका अंतिम लक्ष्य संपूर्ण मानवता और प्राणीमात्र को प्रेम तथा एकता के सूत्रों में बाँध देना है ।

अतः सामाजिक समस्याओं का विवेचन करना साहित्य का एक उद्देश्य है । सामाजिक समस्याओं का स्वरुप स्पष्ट करने के लिए उनकी परिभाषाओं को स्पष्ट कर देना आवश्यक है ।

सामाजिक समस्याओं का स्वरुप स्पष्ट करते हुए Rechard C. Fuller and Richard Myers का कथन है -

" Social problems are behaviour patterns or Conditions that are considered objectionable or undesirable by many members of a society. These members recognize that the corrective policies, programmes and services are necessary to cope with and reduce the scope of these problems."[2]

(सामाजिक समस्या ,उस परिस्थिति अथवा वर्तन प्रकार को कहते हैं, जिसे किसी एक समाज मे अधिकांश सदस्यों द्वारा आपत्तिजनक एवं अनुचित माना गया हो । इसके साथ ही समाज सदस्यों की यह धारणा होती है कि इन सामाजिक समस्याओं का मुकाबला करने के लिए और उनकी व्याप्ति कम करने के लिए सुधार योजना , कार्यक्रम और प्रत्यक्ष सेवा की आवश्यकाता होती है)

रॉबर्ट मर्टन ने सामाजिक समस्या की परिभाषा इसप्रकार दी है -

" The firstand basic ingredient of asocial problem consists of a substantial discrepancy between widely shared social standards and actual conditions of social life."[3]

(व्यापक रुप में स्वीकारें गए सामाजिक आदर्श और समाज जीवन में होनेवाली प्रत्यक्ष परिस्थिति इनमें अधिकांश मात्रा में फर्क होना यह सामाजिक समस्याओं का प्रथम और मूलभूत घटक है ।)

रुबींगटन और बीनबर्ग (Rubington and Weinderg) का कथन है -

" Sociologists usually consider a social problem to be an alleged situation which is incompatible with the values of a significant number of people who agree that action is necessary to alter the situation. "[4]

(समाजशास्त्रज्ञ मानते हैं,जो परिस्थिति बहुसंख्यक लोगों के मूल्यों से जुडी हुई नहीं होती और उन लोगों का मत होता है कि उस परिस्थिति को बदलने के लिए प्रत्यक्ष कृति की आवश्यकता है,उसी परिस्थिति को सामाजिक समस्या कहते है ।)

उपर्युक्त विवेचन से सामाजिक समस्या का स्वरुप स्पष्ट होता है। निष्कर्षतः ऐसा कहा जा सकता है कि -

व्यक्ति के वर्तन से उत्पन्न, समाज के आदर्श पूर्ण न करनेवाली, ऐसी स्थिति अथवा अवस्था कि जिससे समाज के बहुसंख्यक व्यक्तियों के जीवन में बाधा उत्पन्न होती है , ऐसी परिस्थिति अथवा अवस्था को सामाजिक समस्या कहते हैं ।

'शम्बूक ' में वर्णित सामाजिक समस्या -

'शम्बूक' नई कविता की रचना है । जगदीश गुप्त जी की यह मौलिक कृति है । कोई भी मौलिक कृति या काव्य कवि मानस का प्रतिरुप होता है । कवि ने शम्बूक की भूमिका में यह संकेत किया है कि --"सफल काव्य वही है जो अपने प्रभाव से विशिष्ट और सामान्य की दूरी को उत्तरोत्तर कम करता जाय । "[5]

तात्पर्य यह है कि सफल काव्य का प्रभाव सामान्य लोगें तक पहुँच सकता है । शम्बूक काव्य में शम्बूक का विद्रोही स्वभाव उन गहरे मानव -मूल्यों की उपज है,जिनके आधार पर नयी कविता के आंदोलन काल में नये मनुष्य की परिभाषा निर्मित हुई थी । स्वयं कवि के मतानुसार -

''नया मनुष्य रुढि -ग्रस्त चेतना से मुक्त, मानव-मूल्य के रुप में स्वातंत्र्य के प्रति सजग,अपने भीतर आरोपित सामाजिक दायित्व का स्वतः अनुभव करने वाला, समाज को समस्त मानवता के हित में परिवर्तित करके नया रुप देने के लिए कृतसंकल्प, कुटिल स्वार्थ भावना से वितर,मानव-मात्र के प्रति स्वाभाविक सह - अनुभूति से युक्त संकीर्णताओं एवं कृत्रिम विभाजनों के प्रति क्षोभ का अनुभव करने वाला, हर मनुष्य को जन्मतः समान मानने वाला मानव व्यक्तित्व को अपेक्षित निरर्थक और नगण्य सिद्ध करने वाली किसी भी दैविक शक्ति या राजनैतिक सत्ता के आगे अनवनत, मनुष्य की अंतरंग सद्वृत्ति के प्रति आस्थावान, प्रत्येक के स्वाभिमान के प्रति सजग, दृढ एवं संगठित अन्तःकरण सयुक्त,सक्रिय किंतु अपीडक, सत्यनिष्ठ तथा विवेक संपन्न होगा ।''[6]

प्राचीन समाज व्यवस्था की बुनियाद ही वर्णव्यवस्था थी । समाज चार वर्णों में विभाजित था । आगे चलकर वर्ण-व्यवस्था का स्थान जाति-व्यवस्था ने लिया और उसके पश्चात वर्ग-व्यवस्था अपना असर दिखाने लगी । 'शम्बूक ' में युगिन समाज का चित्र अंकित करने में कवि सफल रहा है । आधुनिक युग में स्वराज्य प्राप्ति के बावजूद अपने ही राज्य में सरे आम दलितों का शोषण बरकरार है । उनकी बस्तियाँ जलाई जाती हैं । उनकी आँखे निकाली जाती

हैं। उनकी माँ -बहनों को नग्न बनाकर उनका जुलूस निकाला जाता है । मंदिर के दरवाजे तक पहुँचते ही उनका कत्ल किया जाता है । इन सभी घटनाओं से यही स्पष्ट होता है कि वर्ण-व्यवस्था ,जाति - व्यवस्था, वर्ग-व्यवस्था, छुआछूत ,विषमता, शोषण, अंधःविश्वास और रुढि-परंपराओं के चंगुल से अभी समाज मुक्त नहीं हुआ है । जगदीश गुप्त जी का 'शम्बूक ' इन्हीं समस्याओं का दर्पण है ।

अ. समाज और वर्ण - व्यवस्था -

इस काव्य में जगदीश गुप्त का मुख्य उद्देश मानव मात्र की समानता की भूमि पर वर्णव्यवस्था रहित सच्चे मनुष्य की स्थापना करना रहा है ।

प्रत्येक सामाजिक संस्था का जन्म उस समाज के सदस्यों के संरक्षण और संवर्धन के लिए होता है , किंतु कालांतर में सीमित स्वार्थों के कारण ये संस्थाएँ अपने मूल उद्देश को भुला बैठती है और हितकारी होने की अपेक्षा अहितकार होने लगती हैं । हिंदू वर्ण -व्यवस्था और तद्जन्य जातिव्यवस्था का जन्म भी सदुद्देश्य से ही हुआ था और एक समय तक उसने समाज का कल्याण भी किया । किंतु सीमित वर्ग- स्वार्थों के कारण धीरे -धीरे इस व्यवस्था का रुप विकृत होता चला गया, जिससे समाज दुर्बल और विशृंखल होने लगा । इसी कारण आधुनिक विचारकों के साथ आधुनिक कवि को भी जातिव्यवस्था एवं वर्णव्यवस्था पर बौद्धिक दृष्टि से विचार करना पडा ।

'-ऋग्वेद के 'पुरुष सूक्त ' के एक मंत्र में यह उल्लेख है कि सृष्टि के आदि में ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण ,भुजाओं से क्षत्रिय ,कटि से वैश्य, और चरणों से शूद्र का अविर्भाव हुआ । "[7] आधुनिक विचारधारा इसे स्वीकार करने को तैयार नहीं है । जगदीश गुप्त भी मानव - मानव के इस भेद को मनुष्यकृत मानते हैं । आधुनिक युग में वर्गभेद के कारण आज मानव समाज ऊर्ध्वमुखी पहुँच नहीं सकता ।

यथा --

"हे राम ।
तुम्हारी रची
रक्त की भाषा में
हर बार
तुम्हीं से कहता है
शम्बूक मूक,

तज कर्मवेद- पथ
वर्णभेद पथ
अपनाकर
मानव समाज की
ऊर्ध्वमुखी मर्यादा में
तुम गये चूक । "8

आज नये मानव का प्रतीक शम्बूक किसी को भी - चाहे वह ईश्वर ही क्यों न हो - चुनौती देने में समर्थ है । राम ने कर्म-वेद-पथ तजकर वर्ण-भेद -पथ अपनाया और शूद्र शम्बूक का वध किया। शम्बूक इसे राम की 'चूक' घोषित करता है । जिस प्रकार प्राचीन काल में वर्णव्यवस्था थी, ऐसी आज भी समाज में यह वर्णभेद की समस्या विद्यमान है । आर्यों की वर्णव्यवस्था कर्म के आधार पर थी । परंतु समाज के वर्गसीमित स्वार्थों के कारण आगे चलकर जन्म के आधार पर वर्णव्यवस्था मानी जाने लगी । वर्णव्यवस्था का स्थान जातीव्यवस्था ने लिया इस प्रकार समाज में जातिव्यवस्था का विकृत स्वरुप निर्माण हुआ । जातिव्यवस्था के कारण ही समाज में उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग निर्माण हुअे ।

विप्र -पुत्र को सर्पदंश हुआ और वह कालकवलित हो गया । विप्र-पुत्र की मृत्यु से राम-राज्य कलंकित हो गया । सभी प्रजा मे क्षोभ मच गया । ब्राह्मण पुत्र के सर्पदंश के कारण जनता में राम की कुचर्चा होने लगी । यह गुप्तचर से सुनकर राम भी चिंतातुर हो गये । जैसे --

"गुप्तचर से
प्रजा का अभियोग जाना राम ने
किन्तु शैय्या छोड
आये नहीं सबके सामने "9

गुप्तचरों से प्रजा-द्वारा लगाया गया अभियोग राम को मालूम हो गया, किन्तु वे शय्या छोडकर जनता के सामने नहीं आये। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रजा से लांछित होने के कारण वे प्रजा के सामने आने का साहस नहीं कर सके।

विप्र पुत्र की मृत्यु क्यों हुअी ? इस समस्या पर विचार करने के लिए गुरु वशिष्ठ

को बुलाया जाता है। गुरु वशिष्ठ अपनी कुटी से निकले ही थे कि सामने से नारद आ जाते हैं । वे गुरु वशिष्ठ से कहते हैं कि दण्डकारण्य में एक शूद्र अधोमुख होकर तपस्या कर रहा है और यह शूद्र तपस्या राम के राज्य में हो रही है । अतः यह राजा का पाप है, जिसके कारण विप्र-पुत्र की अकाल -मृत्यु हुअी है । अकाल, सूखा आदि के रुप में दैवी आपदाएँ आ रही हैं। अतः शूद्र (शम्बूक) का वध होना आवाश्यक है । गुरु की मंत्रणा या नारद के मंत्र से राम तत्काल शम्बूक को खोजकर उसका वध करने का संकल्प करता है ।

शम्बूक वध से पूर्व राम और शम्बूक में लंबा संवाद चलता है । शम्बूक राम की व्यवस्था के औचित्य पर प्रशनचिहृन लगा देता है। शम्बूक के माध्यम से कवि ने वर्णव्यवस्था के खिलाफ सवालिया निशाण खडे किये हैं । सभी मनुष्य पृथ्वी पुत्र है, अतः उनमें अंतर नहीं है । यह स्पष्ट करते हुए शम्बूक कहता है --

"सभी पृथ्वी -पुत्र हैं तब जन्म से
क्यो भेद माना जाय
जन्मजात समानता के तथ्य पर
क्यों खेद माना जाय
'जन्मना जायते शूद्रः'
क्या नहीं सबके लिए यह सत्य
और 'संस्कारात ' ही 'द्विज उच्यते '
की घोषणा का क्यों न हो सातत्य "[10]

सभी पृथ्वी -पुत्र समान हैं, फिर जन्म से ही उनमें शूद्र और ब्राहमण का भेद क्यों किया जाय ? जन्मजात समानता के सिध्दांत पर दुःख क्यों हो? शम्बूक आगे स्पष्ट करता है कि क्या यह तथ्य सभी के लिए समान रुप से सत्य नही है कि जन्म से ही सभी शूद्र होते हैं और वे संस्कार के द्वारा ही द्विजत्व प्राप्त करते हैं । इस प्रकार शम्बूक की धारणा है कि सभी मनुष्य पृथ्वी-पुत्र होने के कारण समान हैं ।

शम्बूक अनेक प्रशन उठाता है । राम उसकी तर्क बुद्धि के सामने निरुत्तर हो जाता है । आज जो द्विज-जाति के लोग त्वचा से गोरे हैं, हमारे रक्त तथा उनके रक्त में अन्तर नहीं है। शम्बूक कहता है कि मैं काली देहवाला शूद्र हूँ, इसी कारण तुम मेरे ऊपर संदेह कर रहे हो और शूद्र होने के कारण ही तुम्हारी दृष्टि में मेरा पाप अक्षम्य है और इसीकारण ब्राहमण-पुत्र की मृत्यु कही जाती है । परंतु तुमसे प्रशन पूछता हूँ कि क्या तुम श्यामल वर्ण के नहीं हो? शम्बूक स्पष्ट रुप से कहता है -

"वर्ण से होगा नहीं अब त्राण
कर्म से ही मनुज का कल्याण
जन्म से निश्चित न होगा वर्ण
वर्ण तक सीमित न होगा स्वर्ण
कर्म से ही श्रेष्ठता अधिकार
कर्म सबके लिए सम आधार "[11]

इस प्रकार कवि ने वर्ण -व्यवस्था पर कुठाराघात किया है और यह सिद्ध किया है कि कर्म से ही मनुष्य को श्रेष्ठता प्राप्त हो सकती है । वर्ण -व्यवस्था एवं असमानता का विरोध किया है । वर्णव्यवस्था के कारण ही समाज में असमानता, छुआछूत की समस्या, असहनीय विषमता निर्माण हुआी है ।

शम्बूक राम की व्यवस्था को ठुकराता हुआ स्वाभिमान और निडरता का संदेश देता है। शम्बूक वर्णव्यवस्था तोडकर समाज में समानता की स्थापना और व्यक्ति के विकास पर बल देता है-

"राम क्या तुमको कहूँ भगवान?
स्वाभिमान नहीं निपट अभिमान
स्वाभिमान रहित मनुज है श्वान
दे सको तो दो उसे यह ज्ञान "[12]

शम्बूक राम को भगवान नहीं मानता । उसकी ऐसी धारणा है कि जो व्यक्ति स्वाभिमानी है, वही इन्सान है । स्वाभिमानरहित व्यक्ति कुत्ते के समान है । इसलिए शम्बूक राम को आवहान करता है कि हे राम ! तुम लोगों को ज्ञान दो । तुम वर्गभेद की सीमा तोड दो और मनुष्य की गति उसके सहज विकास की ओर मोड दो। परंतु व्यवस्था के नाम पर राम उसका वध कर देता है-

"अन्तत :
नृप राम ने
लाचार हो,
कर दिया खड्ग-प्रहार
कट गया
शम्बूक का सिर
बह चली
कच्चे रुधिर की धार "[13]

शम्बूक के कटे हुए शीश से कच्चे रक्त की धारा प्रवाहित हो उठती है । परंतु उसका स्वर समाप्त नहीं होता और गीत बनकर गूँजता हुआ कहता है कि असत्य का घेरा टूट जाय और ज्योति-पथ प्रशस्त बने । नये दीप की लौ के समान नयी दृष्टि एवं चेतना चमक उठे ।

इस प्रकार कवि ने शम्बूक के माध्यम से वर्णव्यवस्था पर कठोर प्रहार किया है और उसके साथ ही इस समस्या को हल करने का संकेत भी दिया है ।

आ. छुआछूत की समस्या -

जाति-प्रथा एवं वर्ण - व्यवस्था प्राचीन भारत में निर्मित हुई थी । परंतु आगे चलकर उसका जो रुप निर्माण हुआ वह समाज को विभाजित करने वाला उसके प्रत्येक खण्ड में दूसरों के प्रति घृणा, संकीर्णता और स्वार्थ भावना की वृद्धि करने वाला ही था । अश्पृश्य वर्ग किए गए अत्याचार मानवता और भारतीय सभ्यता के आदर्शों के प्रतिकूल और हिंदू जाति पर कलंक स्वरुप थे । हिंदी कवियों ने इस घातक व्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठाई और अछूतों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की ।'' जन्मना जायते शूद्रः''[14] मान्यता का विरोध किया ।

हरिजनों को मंदिर में प्रवेश करने की अनुमति उच्चवर्ण नहीं देते , यह एक अत्यंत निंदनीय धार्मिक अन्याय है । यदि ईश्वर है और उसने सभी को निर्माण किया है तो निर्माण करते समय वह हरिजनों के स्पर्श से अपवित्र नहीं हुआ और उसकी मूर्ति और निवासगृह अपने पुत्रों के प्रवेश - मात्र से कैसे भ्रष्ट हो सकते हैं? मंदिर में प्रवेश करने से अश्पृश्यों को गाँव से बाहर निकाल दिया जाता है । उनको पुरस्कार स्वरुप जूतें खाने पडते हैं । सभी अछूतों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं । इन जातियों के ऊपर शतब्दियों से अत्याचार होता आ रहा है । उनको अपने समान स्वाधीन करना हमारा सामाजिक, राजनैतिक, और धार्मिक कर्तव्य है ।

जगदीश गुप्त ने भी शम्बूक के माध्यम से छुआछूत की समस्या को उठाया है । शम्बूक का तर्क है कि जब संसार में सभी अपने अच्छे-बुरे कार्यों का फल भोगते हैं, तो शूद्र की तपस्या से ब्राह्मण पुत्र के मरने और शूद्र तपस्वी के वध से ब्राह्मण पुत्र के जीवित होने की बात तर्कसंगत नहीं है । इस मान्यता को शम्बूक ने मृत परंपरा कहा है ।

प्रत्येक अच्छे कार्य का फल अच्छा ही होता है । सभी जातियाँ समान हैं, परंतु समाज में स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण शूद्रों को अत्यंत निम्न स्थान दिया गया और ब्राह्मण आदि स्वयं को अत्यंत उच्च समझने लगे । इस स्वार्थी, विकृत प्रवृत्ति से ही समाज में छुआछूत की समस्या ने विकृत स्वरुप धारण कर लिया ।

शम्बूक की ऐसी धारणा है कि सभी जातियाँ समान हैं । उसमें छोटे-बडे का भाव नहीं है । शूद्र जो तपस्या करे, उसे उसका फल मिलेगा ही । जो भी साधना करे वह साधना के प्रभाव से शक्तिसंपन्न हो सकता है । ब्राह्मणों, क्षात्रियों, और वैश्यों के लिए भी कर्म का महत्व है । उनके कर्म भी उचित अनुचित एवं धर्म -अधर्ममय होते हैं। अतः मनुष्य चाहे किसी भी जाति का हो, उसे उसके अच्छे कर्म का फल मिलना ही चाहिए । सभी मनुष्य अच्छे कर्म करते हुए जीवन साधना में तपकर स्वर्ण के समान कांतिवान बन सकते हैं ।

शम्बूक छुआछूत की समस्या का समाधान चाहता है । वर्णव्यवस्था का भी वह सार्थक ढंग से विरोध करता है --

"जो व्यवस्था
व्यक्ति के सत्कर्म को भी
मान ले अपराध
जो व्यवस्था
फूल को खिलने न दे
निर्बाध
जो व्यवस्था
वर्ग-सीमित स्वार्थ से
हो ग्रस्त
वह विषम
घातक व्यवस्था
शीघ्र ही हो
अस्त " 15

अतः जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्था मनुष्य समाज के लिए व्यर्थ है । अपने को ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए तपस्या का अधिकार सभी को है । फिर शूद्र का तपस्या करना पाप क्यों हो? शम्बूक के जनवादी तर्कों के सामने राम निरुत्तर हो जाता है । परंतु व्यवस्था के नाम पर राम उसका वध कर देता है । मरते हुए भी शम्बूक का स्वर मानव आस्था का अलख जगाता है --

"झूठ का दायरा टूट के
ज्योति-पथ बने ।
जीवन के द्वार- द्वार

पावन संकल्पों की -
नव बन्दनवार तने ।
जन-जन की छाती में
दबे बीज आस्था के
लगें जागने,उगने ।"[16]

राम खड्ग प्रहार करके शम्बूक का शीश काट देता है। परंतु उसका स्वर समाप्त नहीं होता और गीत बनकर गूँजता हुआ कहता है कि असत्य का घेरा टूट जाय और ज्योति-पथ प्रशस्त बने । जीवन के प्रत्येक द्वार पर पावन संकल्पों की नई वन्दनवार तन जाय । जन-जन की छाती में आस्था के जो बीज दबे हुए हैं, वे उगने लगें। नये दीपक की लौ के समान नई दृष्टि एवं चेतना चमक उठे । स्वार्थों की जो काली झंझरी है, उसमें भी तीव्र प्रकाश छन कर प्रसारित हो ।

शम्बूक का "छिन्न शीश" राम की वधनीति को पशुता कहकर पुकारता है । वह अपने तर्क से सिद्ध कर देता है कि किसी की तपस्या से न तो कोई मर सकता है और न कोई जीवित ही हो सकता है --

"किसी की बलि से
किसी की प्राण रक्षा
अंधता से युक्त
यह आदिम व्यवस्था "[17]

शम्बूक ने राम की व्यवस्था पर करारा प्रहार किया है। वह राम से कहता है कि यह तुम्हारी आदिम व्यवस्था है कि किसी के वध से किसी के प्राण की रक्षा हो, अर्थात वध तो मेरा हो और प्राण रक्षा विप्र-पुत्र की हो? इस व्यवस्था पर कोई व्यक्ति विश्वास क्यों करे और इनके प्रति आस्था कौन व्यक्त करे? इससे मनुष्य का कोई गौरव नहीं बढेगा । तुम्हारी जाति भेदता ने जो विषमता फैला दी है, उससे नरक ही बढेगा ।

शम्बूक का प्रेत स्पष्ट करता है कि समाज में भेद बुद्धि की व्यवस्था पाली जा रही है,वहीं मानव की उन्नति में बाधक है । यदि कोई यह प्रश्न करे कि शूद्र की तपस्या और विप्रसुत की मृत्यु तथा शूद्र तपस्वी का वध एवं विप्र-पुत्र के जी उठने का क्या संबंध है, तो इसका उत्तर कौन देगा ? अर्थात इस प्रश्न का उत्तर कोई भी नहीं दे सकता । इस प्रकार कवि ने समाज में होनेवाली जातिव्यवस्था एवं छुआछूत की समस्या का विवेचन किया है ।

इसके साथ ही कवि ने इस समस्या का समाधान भी प्रस्तुत किया है । शम्बूक के प्रेत के द्वारा कवि ने समतामूलक समाज और संस्कृति की स्थापना का आदर्श प्रस्तुत किया है । जिसमें व्यक्ति का सम्मान ही महत्वपूर्ण है --

"है समाज वही सुसंस्कृत
जहाँ होता व्यक्ति का सम्मान
कर सकेगा वही
मानव की समस्या का
सटीक निदान
राज्य जो संस्कृति रहित है,दर्प है
डसेगा मानव - नियति को, सर्प है।"[18]

प्रस्तुत खंडकाव्य में शम्बूक और एकलव्य में समता दिखाई है । एकलव्य को जाति-भेद के कारण गुरु द्रोणाचार्य को अपने हाथ का अँगुठा देना पडा था और शम्बूक का शूद्र तपस्वी होने के कारण वध हुआ है । इसलिए शम्बूक का शीश रुधिर वमन कर के एकलव्य के अँगुठे से रक्त का तिलक लगाने को कहता है ।शम्बूक को ऐसा विश्वास है --

"शिव के तीसरे नेत्र की तरह
वह रक्त -तिलक
प्रज्वलित होते ही
कर देगा भस्मसात्
झूठे अहंकार की
पूरी वासना -देह
निःस्संदेह ।"[19]

शाखा में लटका हुआ शम्बूक का कटा शीश शब्दों से गाढा काला रक्त वमन करके बाण से कटे एकलव्य के गूँगे अँगुठे से कहता है कि उठकर मेरे मस्तक पर ताजे रक्त से तिलक कर दो । यह तिलक प्रज्वलित होते ही शिव के तीसरे नेत्र की तरह वासना और जाति-भेद को भस्मसात कर देगा ।

प्रस्तुत खंडकाव्य में कवि का प्रमुख उद्देश मानव-मात्र की समानता की भूमि पर वर्णव्यवस्था रहित सच्चे मनुष्यत्व की स्थापना करना रहा है । कवि ने दलित मानवता का अभिषेक कराकर झूठे अहंकार,जात्याभिमान,वासना को भस्म करने का संदेश दिया है। शम्बूक के जनवादी तर्कों के सामने राम निरुत्तर हो जाता हैं । परंतु व्यवस्था के नाम पर उसका वध कर देता है । मरते हुए भी शम्बूक का स्वर मानव आस्था का अलख जगाता है । इस प्रकार शम्बूक आधुनिक युग में मानव आस्था को प्रस्थापित करने में समर्थ हुआ है । निम्न पंक्तियों में कवि की मानव के प्रति आस्था और मानवतावादी उद्देश एवं संदेश मुखरित हुआ है -

"मनुजता हो जहाँ आहत,मूक,
वहीं उसका स्वर बने शम्बूक ।"[20]

इ. सामाजिक विषमता -

'शम्बूक' में सामाजिक विषमता का विश्लेषण एवं इस समस्या के समाधान का संकेत मिलता है । रामायण की कथा में शम्बूक शूद्र अर्थात आज के युग के हरिजन के रुप में प्रस्तुत किया गया है । मगर यहाँ गुप्तजी ने शम्बूक को 'हरिजन' की अपेक्षा 'भूमिपुत्र' के रुप में प्रस्तुत किया है । कवि के अनुसार शम्बूक को भूमिपुत्र कहना ही अधिक संगत है । भूमिपुत्र में अर्थ की विशालता है । शम्बूक मनुष्य होने के कारण उसकी श्रेष्ठता बढ गयी है । कवि ने खुद कहा है --

"मेरी दृष्टि में शम्बूक ही नहीं सारे मनुष्य भूमिपुत्र कहलकार नयी सार्थकता पाने के अधिकारी हैं । इस काव्य में यह भाव कई स्थलों पर व्यक्त हुआ है,क्योंकि वह मेरी समग्र विचारधारा का केंद्र बिंदु है ।"[21]

कवि ने आरंभ में ही कहा है कि जहाँ मूक मानवीयता का शोषण किया जाता हो वहाँ शम्बूक मनुजता का स्वर बने --

"मनुजता हो जहाँ आहत,मूक,
वहीं उसका स्वर बने शम्बूक ।"[22]

शम्बूक राम से कहता है कि जन्म से सभी भूमिपुत्र हैं,अतः मनुष्य मनुष्य में क्यों भेद माना जाय ? जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्था मनुष्य समाज के लिए व्यर्थ है । सारे मनुष्य

भूमि की संतान हैं। इस भूमि पर किसी विशेष वर्ग का प्रतिनीधि शासन करने का अधिकारी नहीं । जो पशुता भाव से ऊपर उठकर सारी मानवता को समान दृष्टि से देखता है, वही इस धरती पर शासन कर सकता है । व्यक्ति की पूजा का आधार उसका श्रम ,उसका उचित धर्म ,उचित व्यवहार होना चाहिए । शम्बूक के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि -

"एक का क्यों दूसरा
शोषण करे ?
कर सके तो ---
हित करे, पोषण करे "[23]

इस संसार में एक दूसरे का शोषण न करके यदि हो सके तो वह दूसरे का हित करे । इस प्रकार सभी में एकात्मता व्याप्त हो जाय और मन में किसी प्रकार का भेद भाव न रह जाय । यदि सेवा श्रेष्ठ है, तो सभी ने उसे अपनाना चाहिए और नेष्ट स्वार्थ को छोड देना चाहिए ।

शम्बूक की धारणा है कि ऊर्ध्वगामी बनने के लिए तपस्या का अधिकार सभी को है। फिर शूद्र का तपस्या करना पाप क्यों हो ? यह शम्बूक को मान्य नहीं है । शम्बूक के जनवादी तर्कों के सामने राम निरुत्तर हो जाता है ।

शम्बूक की प्रेतात्मा अपने जीवन का प्रसंग सुनाती हुई राम को संबोधित करती है कि जिसप्रकार घोंसले से नीचे गिरा रोयेंदार लोंदे सा चिडिया का एक बच्चा बढ़कर शक्ति पाता है और जब चाहता है ,अपने पंखों को समेटकर नीचे उतर आता है । मैंने भी इसीप्रकार ऊर्ध्वगामी होकर उन्मुक्त विचरण का स्वप्न देखा था , परंतु समाज में मानव भेद व्यवस्था मेरे मार्ग में व्यवधान बन गई । यह स्पष्ट करते हुए शम्बूक कहता है --

"लेकिन जो भेद -बुद्धि
मान्य है
प्रमाणित है
पूज्य है
--मानव समाज में
वही सदा
मेरे आड़े आयी "[24]

शम्बूक मानव समाज में शूद्र कहलाता है । अतः उसका आस्तित्व भी बहुत अल्प है । फिर भी उसके मन में युग-युग से परिभाषित व्यक्ति के चरित्र और मानव भविष्य को नये संदर्भों में जानने और समझने का संकल्प कर लिया है । वह वर्षों तक न जाने कितना सोचता रहा और अपने को सँभलता रहा, परंतु अपनी उलटी आँखों से उसने जो समता के स्वप्न देखे हैं, वह उन्हें भूल न सका --

"वर्षों तक
कितना सोचा
कितना समझाया
अपने को ,
फिर भी कब भूल सका
उलटी आँखों देखे
ससमता के सपने को "25

शम्बूक स्पष्ट करता है कि समाज की भेद - व्यवस्था सामान्य लोगों के जीवन में बाधक है । इसलिए वह मानव समता मूलक अपनी आस्था को व्यक्त करता है । शम्बूक की दृष्टि में राम मर्यादा पुरुषोत्तम न होकर मात्र 'दण्डनायक भूप' है । शम्बूक सभी को जन्म से पृथ्वीपुत्र मानकर तपस्या से ऊँचा उठाने का हा मनुष्य को अधिकार देता है । वह राम से प्रश्न करता है कि यदि तपस्या अच्छा काम है तो वह शूद्र द्वारा दुष्कर्म कैसे हो सकता है ? धर्म सब के लिए एक है । आदर और अपमान की दृष्टि से सभी मानव समान हैं ,तो फिर धर्म के नाम पर मनुष्य ही मनुष्य का हत्यारा क्यों ? यह एक समस्या है । जिसे व्यवस्था के प्रतीक राम और शोषण का शिकार शम्बूक के माध्यम से प्रस्तुत की गई है ।

सभी लोग भूमि-पुत्र हैं । अतःमानव मानव के बीच में असमानता का व्यवहार करना अन्याय है । शम्बूक कर्मठ व्यक्ति है । उसे क्रियाशीलता में ही विश्वास है । शम्बूक व्यवस्था का कड़ा विरोध करता है और राम के अन्याय पक्ष पर प्रहार करता है ।शम्बूक शोषित का प्रतीक है । विप्र-बालक के मर जाने का कारण शम्बूक तप माना जाता है । इस बात पर राम विश्वास रखता है और उसका वध करने का निर्णय लेता है । इसप्रकार व्यवस्थाद्वारा शम्बूक पर अन्याय किया जाता है । आज भी समाज में अनेक शम्बूक है, जिनपर व्यवस्था के द्वारा अन्याय तथा अत्याचार किया जाता है तथा उनका शोषण किया जाता है ।

शम्बूक किसी से द्वेष भावना नहीं रखता है । लोकमंगल ही उसका ध्येय है । शम्बूक कहता है कि वह नियम का बंधी नहीं है । अब वह तपस्वी है, नहीं तो वह राम से युद्ध के लिए भी तैयार होता । शम्बूक अपने ध्येय की प्राप्ति के लिए लड़ रहा है । उसे मालूम है कि राम उसकी हत्या के लिए आ गया है । लेकिन शम्बूक मृत्यु से डरता नहीं है । वध के पूर्व उसके कंठ से जो उद्गार निकलते हैं, उससे शम्बूक के व्यक्तित्व का महत्व बढ़ जाता है। सामाजिक विषमता का विवेचन करते हुए वह समानता के अधिकार की घोषणा करता है --

"सहज समता हो सभी में व्याप्त
व्यवस्था के हेतु यह पर्याप्त
भूमि पर फिर भूमि की संतान
करे शासन , श्रम बने श्रीमान
शक्ति से अपनी, रहे गतिमान
नयी धरती पर नया इन्सान "26

यहाँ शम्बूक का महान आदर्श अभिव्यक्त हुआ है । शम्बूक राम से स्पष्ट शब्दों में कहता है कि तुम्हारी व्यवस्था तभी पर्याप्त हो सकती है , जब सभी समाज में समता प्रस्थापित हो जाय । पृथ्वी पर पृथ्वी का पुत्र ही शासक बने और श्रम करने वाले को ही महत्व दिया जाय । नया मनुष्य इस धरती पर स्वावलंबी बनकर अपनी ही शक्ति से गतिमान रहे ।

शम्बूक के इस कथन में वर्तमान शासकों के लिए संदेश है । सामाजिक विषमता के कारण आज समाज की प्रगति नहीं हो सकती । निम्न जाति तथा पद्दलित जनता का शोषण किया जाता है । उनको समाज में सम्मान नहीं मिलता । इसलिए यह सामाजिक विषमता नष्ट करने का संदेश प्रस्तुत खंडकाव्य में शम्बूक के द्वारा दिया है ।

ई. शोषितों की दुर्दशा-

इस संसार में केवल दो ही जातियाँ हैं -शोषक और शोषित । शोषकवर्ग - व्यापारी, जमीनदार, उद्योगपति -प्रारब्ध के नाम पर पूँजीवादी व्यवस्था को बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील है और जब तक यह पूँजीवादी व्यवस्था बनी रहेगी तब तक शोषण का अंत असंभव है । दूसरा वर्ग है - शोषित , जिसका शोषण किया जाता है । शोषित मानव-जाति के लिए एक घोर अभिशाप है और इसका निवारण साम्यवादी व्यवस्था का लक्ष्य है ।

साम्यवादी व्यवस्था की प्रतिष्ठा के लिए सामंतवादी परंपराओं का समूल नाश आवश्यक है । केवल परंपराओं का नाश ही पर्याप्त नहीं, बल्कि शोषक वर्ग का ध्वंस वांछनीय है । आज के निर्मम शोषण की चक्की के पाटों में पिसनेवाले शोषित वर्ग- मजदूरों, किसानों एवं पीडितों की दशा का प्रगतिवादी कलाकार ने सहानुभूतिपूर्ण कारुणिक चित्रण किया है । प्रायः सारे प्रगतिवादी काव्य में यही करुण कहानी है जिसमें सांसारिक सुखों से वंचित शोषित वर्ग के जीवन के करुण अध्याय जुड़े हुए हैं ।

मजदूर सुख के सब उपकरणों का सृष्टा है पर वह स्वयं उससे वंचित है, वह अन्नदाता है, पर भूखा है । आज हमारे देश का दरिद्र नारायण मजदूर और किसान है । उनकी दीन दशा का अंकन आधुनिक कवियों ने किया है । डॉ. जगदीश गुप्त ने भी शम्बूक में दीन-हीन तथा पददलित लोगों का चित्रण किया है ।

वनदेवता राम का स्वागत और स्तवन करती है और उसके पश्चात अपने देश दण्डकारण्य की समस्याएँ और वहाँ के लोगों की दयनीय स्थिति राम के सामने रखती है । यहाँ वनदेवता का जो कथन है वह वर्तमान संदर्भ में है । वनदेवता राम से कहती है --

"सुना
फैली है तुम्हारी
योजनों तक योजनाएँ
पर अगर
सीमित रही
आयोजनों तक योजनाएँ
यदि पहुँच पायी नहीं
भूखे जनोंतक योजनाएँ
पर्वतों, नदियों ,पठारों
निर्जनों तक योजनाएँ"[27]

वनदेवता राम को संबोधित करती हुई कहती है कि तुमने राज्य के कल्याण के लिए बहुतसी योजनाओं का आयोजन किया है । परंतु तुम्हारी ये योजनाएँ यदि आयोजनों तक ही सीमित रही और कार्यान्वयन रुप में जनता के सामने न आई तथा इनका प्रसार भूखों जनों तक न हो पाया, एवं नदियों ,पर्वतों, पठारों और निर्जनों तक न फैली, तो इनसे जनता को कुछ भी लाभ न होगा ।आज

योजनाएँ तो बहुत बनती हैं, परंतु वे आयोजनों तक ही सीमित रह जाती हैं । वे जनता तक पहुँचकर उनका कल्याण नहीं करती ।

वनवासी लोग मेहनत करते हैं । किसी भी कष्ट में लज्जा का अनुभव नहीं करते । ये वन के निवासी अंधविश्वासों के कारण बहुत से बुरे काम भी करते हैं । ये लोग मदिरा पान करते हैं । ये लोग इतने गरीब हैं कि उन्हें पहनने के लिए कपड़े भी नहीं मिलते हैं । फिर भी राम के रक्षक इनके साथ पशु-तुल्य व्यवहार करते हैं ।

ये वन के निरक्षर, विवश और पिछड़े हुए लोग कब तक यातनाएँ सहन करते रहेंगे? यहाँ के निवासी जो अधमरे हो रहे हैं वे कहाँ तक संतोष धारण करे ? राम के वन-रक्षक इनके साथ पशु के समान व्यवहार क्यों कर रहे है ? इनको मानवता का व्यवहार क्यों प्राप्त नहीं होता? इनको सद्भाव से कृतकृत्य क्यों नहीं किया जाता ? इन वनवासियों को अपतत्व का साधन मिलना चाहिए । यह स्पष्ट करते हुए जगदीश गुप्त ने वनदेवता के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किये हैं ---

"इन्हें भी अपनत्व का
साधन मिले
धन मिले या नहीं
पर ईंधन मिले
ये चना अपने चबाकर
हाथ चाटेंगे
या रहेंगे मौन,
अपना पेट काटेंगे "[28]

इन वनवासियों को धन चाहे मिले, अथवा न मिले परंतु जलाने को ईंधन तो मिलना ही चाहिए । राम के वन के रक्षक इसे भी छीन लेते हैं । ये लोग कब तक चने चबाकर हाथ चाटते रहेंगे अर्थात कब तक कष्ट ही भोगते रहेंगे और अपना पेट काटकर अर्थात भूखे रहकर मौन बने रहेंगे? इसप्रकार इन लोगों की इतनी दयनीय स्थिति हैं कि रोटी, कपडा और मकान के लिए उन्हें दर -दर की ठोकरें खाते हुए घुमना पड़ता है ।

ये वन के निवासी बहुत से बुरे काम भी करते हैं । ये झख मारकर उन्हीं बुरे कामों

में फँसे रहते हैं । वे मदिरा पानकर भँवर बने गुँजारव करते हैं । चंद्रमा,सूर्य, अग्नि आदि सभीकी पूजा करते हैं । परंतु अपने पेट की आग बुझाने में वे असमर्थ हैं । जैसे --

"अग्नि से ही प्राप्ति सारी सिद्धि है
अग्नि में ही व्याप्त इनकी ऋद्धि है
यह जलाती हैं इन्हें दावाग्नि
या गलाती है इन्हें जठराग्नि "[29]

अग्नि से ही सारी सिद्धि प्राप्त होती है और अग्नि में ही सिद्धि व्याप्त होती है । उनको या तो दावाग्नि जलाती है अथवा पेट के भूख की आग गला देती है । भूख की समस्या आज के समाज की प्रमुख समस्या बनी हुआी है।

ये वनवासी स्वभाव से अत्यंत भोले-भाले हैं । ये सोत-जगते बिना किसी कामना से राम का नाम जपते रहते हैं । इनको शबरी की पूरी कहानी याद है । जिस प्रकार शबरी ने राम की प्रतीक्षा की थी और उनको प्रेम से जूठे बेर खिलाये थे, उसी प्रकार ये भी राम के आने की राह रात- दिन देखते हैं । गृह- स्वामिनी शबरियों ने अपनी झोपड़ीके बीच में बेरों का ढेर कर रखा है । यदि ये शबरियाँ राम के आने का समाचार सुन लेंगी, तो वे आनंद से झूम उठेगी । उनके आने पर वे अपनी धुमैली झोपड़ी को गोबर से लीपकर उसका स्वागत करेंगी और उसको वे जूठे बेर परोस देंगी । परंतु भोले शबर और शबरियों को नगरवासी मृग-मीन के समान शिकार की वस्तु समझते हैं ।

इस प्रकार शबर तथा वनवासियों को व्यवस्था के प्रतीक राम के प्रति अत्यंत आदर और श्रद्धा है । वे अपने शासक पर प्रेम करते हैं । परंतु शासक वर्ग उनको फँसाकर मन माने अत्याचार करता है, उनका शोषण करता है ।

डॉ. जगदीश गुप्त जी ने इन वनवासियों का यथार्थ चित्र अंकित करते हुए लिखा है

"यह विजन
नंगे बदन
बनवासियों का देस
यह विजन
मन में मगन
बनवासियों का देस "[30]

इन वनवासियों के देश मे वनवासी नंगे शरीर रहते हैं । इस सुनसान वन के निवासी अपने मन में मगन रहते हैं। यह सुख-सुपासों और अभावों से भरा देश है ।

राम नगरवासी और चक्रवर्ती है । वह सुख में रहने वाला है, अतः उसे इस विजन का अपमान नहीं करना चाहिए । इसे अपना ही जन समझकर उनके साथ मानवता का व्यवहार करना आवश्यक है । परंतु शोषक वर्ग शोषितों का शोषण बरकरार करता रहता है । इसलिए आज समाज में विषमता की खाई बढती जा रही है ।

इस प्रकार प्रस्तुत खंडकाव्य में शोषितों की दुर्दशा का चित्रण किया है । जो शोषित है, दलित तथा निम्न जाति के हैं, उन्हें हमेशा रोटी, कपडा और मकान के लिए झगड़ना पडता है वे अधपेट रहते हैं । नंगे बदन वनवासियों की तरह अपना जीवन बिताते हैं । फिर भी शोषक वर्ग इनका शोषण करते हुए उन्हें अधिक नंगा बनाते हैं। इसलिए शोषितों की समस्या अधिक जटील बनी हुई है । शोषितों की दुर्दशा का चित्रण जिसप्रकार कवि ने किया है उसके साथ ही यह समस्या सुलझाने का उपाय भी स्पष्ट किया है । यह समस्या कम करने का एक ही मार्ग है - वह है शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति तथा मानवता से व्यवहार करना । जब दीन-दलित लोगों के साथ मानवता का व्यवहार किया जायेगा तब यह समस्या कुछ मात्रा में हल हो सकती है।

उ. रूढ़ि-परंपरा और अंधविश्वास -

डॉ. जगदीश गुप्त एक सच्चे समाज - सुधारक हैं । उनकी रचनाओं में संतुलित समदृष्टि एवं अद्भूत सुधार-भावना भी है । इसलिए गुप्त जी नें छुआछूत का विरोध करके ऊँच -नीच की भावना को बुरा बताया और हिंदुओं में व्याप्त वर्ण - व्यवस्था की खिल्ली उड़ाकर मानव-मात्र की एकता एवं समानता पर जोर दिया है । इसलिए पाखण्ड एवं मिथ्याडम्बरों का विरोध करके गुप्त जी ने सत्य एवं शुद्ध आचरण का भाव पैदा किया है । अतः समाज में व्याप्त वैषम्य का विरोध करके उसमें साम्य स्थापित करने का प्रयत्न किया है । परोपकार , सेवा, क्षमा, दान,धर्म, अहिंसा आदि का प्रचार करके जन-जीवन में शुद्धाचरण एवं सात्विकता वृद्धि पर जोर दिया है । सामाजिक एवं धार्मिक विद्रूपताओं के प्रति आक्रोश व्यक्त करके समाज को सुव्यवस्थित करने का प्रयत्न किया है ।

ब्राह्मण -पुत्र की अकाल मृत्यु से राम और उनका दरबार चिंतित होता है । एक ब्राह्मण शिखा खोले हुए बाहें उठाकर अभिशाप दे रहा है । ब्राह्मण के करुण एवं अवसादपूर्ण

अभिशाप को सुनकर राम तथा उनके सभी बंधु-बाँधव आदि सभी चिंतित बने हुए हैं । मंत्रियों के साथ - साथ राम भी चिंतित बैठे हुए हैं। इस प्रकार विप्र के दुःख से सारा अयोध्याधाम चिंतित हुआ है । भक्त भी चिंतित होकर हरि-नाम का जप कर रहे हैं । जैसे -

"बन्धु-बान्धव सब रहे
अविराम चिंतित
मंन्त्रियों के साथ
बैठे राम चिंतित विप्र के दुख से
अयोध्या धाम चिंतित
जप रहे थे भक्त भी
हरि नाम चिंतित "31

विप्र -सुत की अकाल मृत्यु की समस्या को लेकर लोगों का दुःख इसप्रकार बढने लगा, जिस प्रकार दिन का ताप बढ़ता है और सभी लोग अपने अपने विचारों के अनुसार उसका संबंध जोड़ने लगे । राज-वैद्य ब्राह्मण -पुत्र के विष दंश का उपचार कर रहे थे, परंतु उनका श्रम व्यर्थ हो गया और ब्राह्मण -पुत्र जीवित न हो सका । इस समस्या को लेकर अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाएँ होने लगी -

"एक बोला -
विप्र-पुत्र अकाला ही मर जाय
इससे बड़ी कौन विपत्ति ?
दूसरे ने कहा --
यह तो विधाता की
सूचना भर है,
देश पर अति शीघ्र
आयेगी महा आपत्ति "32

तीसरा नगरवासी कहता है --

तीसरा कहने लगा
होगा तभी संतोष,
जाने ले जब लोग
इसमें राम का क्या दोष?"32

इन तीनों नगरवासियों के कथन से स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन समाज - व्यवस्था पर अंधविश्वास कितना हावी हो गया था । लेकिन कुछ ऐसे लोग भी होते हैं कि जो अंधविश्वासों को ठुकराकर हकिकत की बुनियाद पर खड़े रहकर सच्चाई का पर्दाफाश करने का प्रयास भी करते हैं । जैसे कि उपर्युक्त तीनों नगरवासियों की प्रतिक्रिया सुनकर चौथा नगरवासी बोल उठता है

"उठा चौथा बोल -
मरना और जीना
भाग्य के आधीन
व्यर्थ ही बकवास है सब,
पर न माने तीन "[33]

मरना और जीना भाग्य के आधीन है । इसमें रामराज्य को दोष देना व्यर्थ ही बकवास है, परंतु तीनों नगरवासी राम-राज्य पर व्यर्थ ही दोषारोपण कर रहे थे । क्योंकि उनका अंधश्रद्धा पर विश्वास था । सत्य क्या वस्तुस्थिति है यह जानने के लिए वे उत्सुक नहीं थे । इसप्रकार राम-राज्य में पाप हुआ इसलिए विप्र-पुत्र की मृत्यु हुअी इसपर सभी विश्वास रखते हैं । यह एक प्रकार से अंधश्रद्धा ही है ।

मंत्री -परिषद इस समस्या पर विचार करने के लिए संघटित होती है, परंतु कुछ निर्णय नहीं ले पाती । तब गुरु वशिष्ठ बुलाये जाते हैं । गुरु वशिष्ठ के कुटि से निकलने के पश्चात नारद मार्ग में मिल जाते हैं। वे घोषणा करते है कि

"राम का होगा नहीं कल्याण
नहीं जीवित हो सकेगा
विप्र-सुत म्रियमाण"[34]

वशिष्ठ ने नारद के कटु शब्द सुनकर प्रश्न किया कि राम का कल्याण क्यों नही होगा? सर्पदंश से पीडित विप्र-सुत की रक्षा क्यों नहीं होगी ?जबकि राज-वैद्य उसका उपचार कर रहे हैं । विप्र-सुत को सर्प-दंश और राम-राज्य का कल्याण इनका क्या संबंध है?

उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर देते हुए नारद कहता है कि विप्र-पुत्र की मृत्यु यह आगे आनेवाली विपत्ति का संकेत है । गुरु वशिष्ठ इस बात पर विश्वास नहीं रखते । परंतु उन्हें सभी समाज के साथ इस बात पर विश्वास रखना पडता है । क्योंकि परंपरा के अनुसार ब्राह्मण

वर्ग को समाज में अधिक सम्मान दिया जाता है । यदि यहाँ इसी प्रकार सर्पदंश से किसी शूद्र -पुत्र की मृत्यु होती, तो शायद इस समस्या का कोई विचार भी न करता । अतः समाज में परंपरा से चली आयी रुढियों का पालन किया जाता है । आगे चलकर नारद वशिष्ठ से स्पष्ट शब्दों में कहते हैं- कि विप्र -सुत की मृत्यु से शूद्र की तपस्या का क्या संबंध है? परंतु समाज में अनेक प्रकार की मिथ्या मान्यताएँ एवं गलत धारणाएँ होती हैं । समाज में विशिष्ट वर्ग के लोग अपने स्वार्थ के लिए परंपराओं का पालन करते हैं । आगे नारद इस पाप से मुक्तता पाने का उपाय स्पष्ट करते हैं -

"विपिन जाकर
शूद्र -मुनि - वध
जब करेंगे राम
विप्र-सुत
होगा तभी जीवित
सहज परिणाम "35

वस्तुतः शूद्र -मुनि का वध और विप्र-पुत्र का जीवित होना इसका कुछ संबंध नहीं है । परंतु देवताओं ने सदैव अपने स्वार्थ में अंध होकर अपने अनुकूल समाज में अनेक मिथ्या कल्पनाएँ फैला दी हैं ।

आज विज्ञान युग है । इस युग में अनेक वैज्ञानिक खोजों के सहारे भौतिक सुख सुविधाएँ निर्माण हुआी हैं । मानवी जीवन में सुख समृद्धि आयी है । आज वैज्ञानिक तथा बुद्धिवादी लोग प्रत्येक घटना का विज्ञान के सहारे मूल्यांकन करते हैं। फिर भी बीसवीं शताब्दि के वैज्ञानिक युग में अनेक प्रकार की अंधाश्रृद्धाएँ तथा मिथ्या मान्यताएँ हैं । आज धर्म के ठेकेदार भोली-भाली जनता को बहकाकर अनेकानेक पाखण्डों, बाह्याचारों, अंधविश्वासों एवं मिथ्या आडंबरों में फँसाते हैं । कर्मकांड ,तीर्थाटन ,व्रत-उपवास,कथावार्ता, वेदाध्यान,यज्ञ-होम आदि में आडंबरप्रियता है। इन अंधविश्वासों में निम्न जाति के लोग ही अधिक फँसाये जाते हैं । गुप्त जी ने भी अपनी प्रस्तुत रचना में इस समस्या के प्रति संकेत किया है । निम्न स्तर के लोगों को किसप्रकार अंधविश्वासों का शिकार होना पडता है इसका विवेचन किया है ।

निष्कर्ष -

'शम्बूक ' खण्डकाव्य का प्रमुख उद्देश मानव-मात्र की समानता की भूमि पर

वर्णव्यवस्थारहित सच्चे मनुष्यत्व की स्थापना करना है । इससे स्पष्ट है कि मनुष्य को सच्चे मानव के रुप में देखने का प्रयास इस काव्य में किया है । रुढ़िवादी समाज की असहनीय विषमता उसकी मानसिक यातना प्रस्तुत रचना में सशक्त होकर अभिव्यक्त हुई है । प्रस्तुत रचना में समास्याएँ उठायी गई हैं और परोक्ष रुप से उसके समाधान भी प्रस्तुत किए गये हैं ।

'शम्बूक ' में अनेक प्रकार की सामाजिक समस्याएँ उठायी गई हैं, जिनमें मुख्य निम्न समस्याएँ हैं --

(अ) समाज और वर्ण व्यवथा ।

(आ) छुआछूत की समस्या ।

(इ) सामाजिक विषमता ।

(ई) शोषितों की दुर्दशा ।

(उ) रुढ़ि -परंपरा और अंधविश्वास ।

कवि ने इन समस्याओं का विवेचन रामायण की 'शम्बूक-वध' की कथा का आधार लेकर किया है । इसलिए प्रस्तुत खण्डकाव्य की कथा के संबंध में ऐसा कहा जा सकता है कि कथा पुरानी है परंतु इसमें आधुनिक समस्याओं का विवेचन किया है । इसमें पहली समस्या है - वर्णव्यवस्था ।

'शम्बूक' में मुख्यतः कवि ने तत्कालीन समाज और व्यवस्था को समकालीन संदर्भों में किस प्रकार प्रस्तुत किया है यह हमने विस्तार के साथ देख लिया है । वर्गसीमित स्वार्थों के कारण समाज में वर्णव्यवस्था से जातिव्यवस्था निर्माण हुई । जातिव्यवस्था के कारण ही समाज में असहनीय विषमता फैल गई । परंतु जगदीश गुप्त जी स्पष्ट घोषणा करते हैं कि सभी पृथ्वीपुत्र हैं। अतः सभी समान हैं । जन्म से सभी समान होते हैं और वे संस्कार के द्वारा ही द्विजत्व प्राप्त करते हैं । अतः सभी को ज्ञान देना चाहिए और वर्गभेद की सीमा तोड़कर सभी का विकास करना आवश्यक है । समाज में नयी दृष्टि और नयी चेतना निर्माण करके वर्णव्यवस्था तथा जातिव्यवस्था का ध्वंस करना वांछनीय है । इसप्रकार कवि ने समाज में समानता की स्थापना और व्यक्ति के विकास पर बल दिया है ।

इस काव्य में दूसरी समस्या है - छुआछूत की समस्या । स्वार्थ भावना के कारण

समाज में वर्णव्यवस्था से जातिव्यवस्था निर्माण हुई । इससे ही श्पृश्य-अश्पृश्य तथा छुआछूत की भावना बढ गई । इस प्रकार भारतीय सभ्यता के आदर्शों के प्रतिकूल और हिंदु जाति पर कलंक स्वरुप समाज में इस समस्या का प्रसार हुआ । इसलिए कवि ने अछूतों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की है । कवि ने शम्बूक के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किये हैं। आज भी अछूतों को मंदिर में प्रवेश करने की अनुमति उच्च वर्ण नहीं देता, यह अत्यंत निंदनीय धार्मिक अन्याय है । मंदिर में प्रवेश करने से अश्पृश्यों को गाँव से बाहर निकाल दिया जाता है । उनको पुरस्कार स्वरुप जूतें खाने पडते हैं । इन अश्पृश्य जातियों पर सैंकड़ो वर्षों से अत्याचार तथा अन्याय किया जा रहा है । ऐसे अश्पृश्यों को स्वाधीन करना और उनको समानाधिकार देकर उनकी प्रगति करना हमारा कर्तव्य है, यही भावना कवि ने व्यक्त कियी है ।

तिसरी प्रमुख समस्या है -सामाजिक विषमता ।जातिव्यस्था के कारण समाज में विषमता निर्माण हुई है । कवि स्पष्ट करता है कि समाज की भेद व्यवस्था सामान्य लोगों के जीवन में बाधक है । इसलिए कवि मानव समतामूलक आस्था को व्यक्त करता है । सभी लोग भूमि-पुत्र है, अतः मानव मानव के बीच में असमानता का व्यवहार करना अन्याय है ।

इस काव्य में चौथी सामाजिक समस्या है - शोषितों की दुर्दशा। इस समाज में केवल दो ही जातियाँ है, शोषक और शोषित ।शोषित मानव जाति के लिए घोर अभिशाप है । शोषण की चक्की के पाटों में आज निम्न -वर्ग तथा दलित -वर्ग पीसे जाते हैं । इन शोषित -वर्ग की दशा का चित्रण भी इस काव्य में हुआ है ।

पाँचवीं समस्या है -- रुढि - परंपरा और अंधविश्वासों का चित्रण । आज विज्ञान के युग में भी समाज में अनेक प्रकार के अंधविश्वास प्रचलित हैं । विप्र-पुत्र की अकाल मृत्यु हुअी इसलिए रामराज्य में संकट आयेगा । शूद्र -मुनि तप और विप्र-पुत्र की मृत्यु, शूद्र मुनि का वध और विप्र-पुत्र का जीवित होना यह सब रुढ़ि परंपराओं का पालन है ।

साराशं रुप से यह स्पष्ट होता है कि प्रस्तुत काव्य में कवि ने विभिन्न सामाजिक समस्याओं को उठायाहै और उसके साथ ही उन समस्याओं को हल करने के संकेत भी दिए हैं। इसप्रकार डॉ. जगदीश गुप्तजी का 'शम्बूक' अनेक सामाजिक समस्याओं का दर्पण है ।

संदर्भ सूची

1. डॉ. प्रमचंद विजयवर्गीय - आधुनिक हिंदी
कवियों का सामाजिक दर्शन
प्रकाशक - बाफना प्रकाशन
चौडा रास्ता, जयपुर - 3 पृ. 26

2. प्रा. डॉ. माधव कशाळीकर भारतातील सामाजिक समस्या -
का लेखः संपादक - डॉ. विलास संघवे,
पाप्युलर प्रकाशन, मुंबई
पहिली आवृत्ति - 1979
सामाजिक समस्या - सैध्दांतिक विवेचन पृ. 4

3. ------------------------ तदैव ------------------ पृ. 4

4 ---------------------- तदैव -------------------- पृ. 4

5. डॉ. जगदीश गुप्त - शम्बूक
कविकथन, पृ. 7

6. ------------------ तदैव --------------------- पृ.10

7. ब्राह्मणो स्य मुखमासीद् बाहू राजन्यःकृत
उरु तदस्य यद् वैश्यः पद्म्या शूद्रो अजायत "
क्र. /0/90/12/ आधूनिक हिंदी कवियोंका सामाजिक जिवन दर्शन
डॉ. प्रेमचंद विजयवर्गीय पृ. 109

8. डॉ. जगदीश गुप्त - शम्बूक, पृ.1

9. ------------------ तदैव --------------------- पृ.7

10 ------------------ तदैव --------------------- पृ.49

11 ------------------ तदैव --------------------- पृ.62

12 ------------------ तदैव --------------------- पृ .64

13 ------------------ तदैव --------------------- पृ.68

14 ------------------ तदैव --------------------- पृ.49

15 ------------------ तदैव --------------------- पृ.45

16 ------------------ तदैव --------------------- पृ.69

17 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.78

18 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.97

19 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.102

20 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.2

21 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.14

22 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.2

23 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.75

24 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.85

25 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.84

26 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.68

27 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.29

28 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.30

29 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.31

30 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.32

31 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.8

32 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.8-9

33 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.9

34 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.10

35 ------------------ तदेव ---------------------- पृ.12